Himalayan Journal of Social Sciences & Humanities
(A Peer Reviewed Journal of Society for Himalayan Action Research and Development)

ISSN: 0975-9891

अथर्ववेद में चिकित्सा

रेखा नौटियाल
संस्कृत विभाग, रा0स्ना0 महाविद्यालय उत्तरकाशी

Manuscript Info

Manuscript History

Received: 13.10.2016
Revised: 21.11.2016
Accepted: 27.11.2016

कुंजी शब्द–

चिकित्सा, काकजंघा, त्रियंगु, गन्धपलाशी, वात–पित्त–कफ, यक्ष्मा आदि।

सारांश

अच्छा स्वास्थ्य जीवन के लिए महावरदान है। यदि अच्छा स्वास्थ्य होगा तभी हम सांसारिक कार्यों को सम्पन्न करने में सक्षम हो सकेंगे। क्योंकि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है। महाकवि कालिदास की उक्ति है कि–शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्। स्वास्थ्य का सम्बन्ध व्यक्ति के शरीर मन तथा संवेगों से होता है। इस प्रकार जो व्यक्ति शारीरिक, मानसिक एवं संवेगात्मक दृष्टि से पूर्वरूपेण सामान्य होता है, उसे ही स्वस्थ व्यक्ति कहा जाता है। स्वस्थ रहने के लिए शरीर एवं मन दोनो का स्वस्थ रहना आवश्यक है। यदि शरीर स्वस्थ एवं पुष्ट है ,किन्तु मन दुर्बल ,अस्वस्थ एवं रोगी है तो ऐसा शारीरिक स्वास्थ्य किसी काम का नहीं। स्वस्थ शरीर एवं स्वस्थ मन ये दोनों ही पूर्ण स्वास्थ्य के अन्तर्गत आते हैं। प्राचीन भारतीय ऋषियों ने वेदों में मनुष्य के अच्छे स्वास्थ्य के लिए उचित नीति, आचार, आहार आदि का विस्तृत वर्णन किया है। अथर्ववेद में अनेक रोगों का निदान व चिकित्सा का वर्णन किया गया है। आज के युग में अथर्ववेद में प्रचलित चिकित्सा प्रणाली मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं उपादेय है। इसके अतिरिक्त यज्ञ हवन आदि से भी रोगों के निवारण का उल्लेख किया गया है।

वैदिकसाहित्य एवं प्राचीन भारतीय साहित्य में चार उपवेदों की कल्पना देखने को मिलती है। ये चार उपवेद हैं– आयुर्वेद, गन्धर्ववेद, धनुर्वेद और अथर्ववेद। इन चारों उपवेदों में आयुर्वेद का नाम सर्वप्रथम और प्रमुखतया लिया जाता है। क्योंकि इसका सीध सम्बन्ध मानव की आयुवृद्वि के साथ–साथ उसके स्वास्थ्य से है। मानव जीवन की चार उपलब्धियां मानी जाती हैं–धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इसका आशय यह है कि मानव को अपने जीवन में इस चतुर्वर्ग का पालन करना चाहिए। और ये तभी सम्भव है जब मनुष्य स्वस्थ हो। चरक संहिता में लिखा गया है–

धर्मार्थ काममोक्षाणामारोग्यंमूलमुत्तमम्।

रोगास्तस्याहन्तरिः श्रेयसो जीवितस्य च।।

इस श्लोक से स्पष्ट ज्ञात हो जाता है कि आयुर्वेद का प्रयोजन शरीर को रोगों से बचाना है। सामान्यतः इस उपवेद का आरम्भ अथर्ववेद को माना जाता है। वैदिक साहित्य के उल्लेखों से तत्कालीन आयुर्वेद–विज्ञान सम्बन्धी प्रत्यक्ष प्रमाण दिखाई देते हैं। अश्विनी, वरूण, रूद्र आदि अनेक देवता वैद्य थे।[1] वरूण का एक बहुत बड़ा औषधालय था।[2]

अथर्ववेद में अनेक रोगों के लक्षण, निदान और चिकित्सा का सूक्ष्म विवेचन है। अथर्ववेद में कम से कम 110 औषधियों के नाम मिलते हैं। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण औषधियों के लोक में प्रसिद्व नामों तथा उनके गुण धर्म का वर्णन किया गया है। रोगों में प्रधान ज्वर है। अथर्ववेद में ज्वर के कारण का उल्लेख करते हुये कहा गया है। कि जब वात–पित्त–कफ विषम या कुपित हो जाते हैं, तब वातिक, पैत्तिक और श्लैष्मिक ज्वर हो जाता है।[3] ज्वर कैसे आता है, ज्वर का उत्पत्ति स्थान कहां से है और ज्वर का निदान क्या है? ज्वर की चिकित्सा वर्णन पांचवें काण्ड के बाइसवें सूक्त मे है। ज्वरनाशक औषधियों में शूद्रा, गान्धरी, अंग व मगध आदि 'ज्वरपहा' अर्थात् ज्वरनाशक औषध्यिों के सेवन का विधन है। लोक में काकजंघा, त्रियंगु, गन्धपलाशी या कचूर, सोम, बेल तथा पिप्पलीनाम से प्रसिद्व औषधियों के ये वैदिक नाम हैं।

श्वास नलियों में कफ जम जाने तथा उनके सिकुड़ जाने से श्वासरोग उत्पन्न हो जाता है। उसकी चिकित्सा 'कुष्ठ' नामक औषाधी के द्वारा किये जाने का वर्णन है।[4] सेम का सहस्थानी या सोम जैसे गुणों वाला यह वैदिककुष्ठ श्वासरोग, नेत्राान्ध्य, ज्वर, शिरिरोग आदि 'यक्ष्मंसर्वचनाशय' समस्त अर्थात् बहुत से रोगों को दूर करता है।

कुष्ठरोग के निदान का उल्लेख करते हुये कहा गया है–

नक्तंजातस्योवधेरामे कृष्णे असिक्नीच।

इदंरजनिरजयंकिला संपलितं च यत्।।[5]

इस मन्त्र में असिक्नी नामक ओषधी का वर्णन किया गया है। असिक्नी को रात्रि में उगने–बढ़ने वाली तथा रंगने वाली कहकर उसे श्वेतकुष्ठ वाले भाग की त्वचा को दूर करने तथा सफेद बालों को काला करने वाली बताया। अथर्ववेद में अनेक स्थानों पर अपामार्ग नामक औषाधी का वर्णन मिलता है। इससे उसका अनेक रोगों में उपयोगी होना सिद्व होता है। अपामार्ग से अग्निमान्द्य, तृषारोग, भस्मकरोगा, बांझपन, शुष्का अस्तम्भन आदि अनेक रोगों की चिकित्सा का वर्णन है।[6]

हृदय में शूल, कम्पन्न या जलन होना ही हृदय रोग है। इस रोग की चिकित्सा 'हरिणस्य विषाणया' हरिण के सींग के द्वारा किये जाने का विधान है। हरिण के सींग के स्पर्श से त्वचा के दोष, प्रलेप से व्रण, भस्म से क्षय, कास, श्वास और अपस्मार की व्याधियां दूर होती है।[7] मृगछाला के प्रयोग से रक्त, पित्त, बवासीर, खाज आदि रोगों को दूर करने का विधान है। पांचवें, काण्ड में शस्त्रों के प्रहार या अन्य किसी कारण से घाव होने पर घावों को भरने व पके घाव को ठीक करने के लिए 'लाक्षा' औषधि का उल्लेख मिलता है। लाख की उत्पत्ति पिलखन, पीपल, खैर, वट व पलाश से निकलती है। यह लाख टूटी हुई हड्डियों को जोड़ने, पुराने घावों को भरने और नयों को तुरन्त ठीक करने में उपयोगी है।[8]

शरीर में प्रविष्ट विष तथा विष प्रभावों के प्रतिहार, निवारण तथा नष्ट करने का भी उल्लेख है। सर्प–विष और उसकी चिकित्सा का वर्णन अथर्ववेद में विस्तार से मिलता है। सर्पों के काटने पर तीन प्रकार के घाव होते हैं– खात, अखात और सक्त। इनमें प्रथम दो अधिक खतरनाक है। इस वेद में ऐसे मन्त्र हैं जिनसे सर्प विष को दूर किया जाता है। शरीर में विष फैल जाने पर कटुतुम्बी के प्रयोग से विष दूर हो जाता है। इसके अतिरिक्त सफेद आक, इन्द्रायाण, जंगलीककोड़ा, अतीस, दारूहल्दी, गोकर्णी मुलहटी आदि को सर्प विष दूर करने में अत्यन्त उपयोगी बताया है। सर्प के काटे का उपाय बन्धन–चिकित्सा भी बतलाई गई है। सर्प के काटते ही तुरन्त बांधना चाहिए। औषधियों के अतिरिक्त अथर्ववेद में सूर्य, अग्नि, जल, वायु, होम, विद्युत आदि के द्वारा चिकित्सा होने का सविस्तार वर्णन है। सूर्य की किरणें सभी रोगों के निवारणार्थ परम औषधि है। नियन्त्री नामक औषाधी सिर के बालों का झड़ना, रोकने, बाल पिफर से उगाने के लिए बालों को मजबूत करने के लिए विशेष लाभदायक है।[9] शर नामक औषधी के सेवन से मूत्र कृच्छरोग का निवारण होता है।[10] ''अरून्धती हड्डियों के बढ़ाने वाली ओषाधी है।''

इसके अतिरिक्त व्रण चिकित्सा, रक्तस्राव को रोकने हृदय की धड़कन हाथ–पैरों में जलन आदि अनेक रोगों का निदान अथर्ववेद में किया गया है। कहीं–कहीं पर जल–चिकित्सा द्वारा स्वप्नदोष को दूर करने का उल्लेख है। यज्ञ

© SHARAD

द्वारा भी विभिन्न रोगों के निदान का वर्णन अथर्ववेद में किया गया है। इस प्रकार यज्ञ के होम द्वारा औषधियों का प्रभाव सीध फेफड़ों में होकर रक्त में चला जाता है जिससे हृदय पुष्ट होता है। होम द्वारा प्लेग, हैजा आदि महामारी रोगों के निवारण का उल्लेख किया गया है।[11]

इस प्रकार भारतीय चिकित्सा पद्धति की सर्वोत्कृष्टता को विदेशी विद्वानों ने भी प्रमाणित किया है। इसी प्रकार मैक्डोनल ने भी लिखा है कि नाक के कट जाने पर फिर मांस का प्रत्यारोपण नाक की रचना करने की विधि आधुनिक युग में यूरोप ने भारत ही से सीखा। इस प्रकार प्राचीन भारतीय साहित्य में आयुर्वेद–विज्ञान का विकास शनैः शनैः उन्नत अवस्था में होता रहा। जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण आधुनिक युग की चिकित्सा पद्धति है।

सन्दर्भ सूची–

1. ऋग्वेद 1.11616, 1.24, 9, 2.33.4,
2. ऋग्वेद 1.24.9
3. अथर्ववेद 5–22–10
4. अथर्ववेद 5–4
5. अथर्ववेद 1–23–1
6. अथर्ववेद 4–17–6.7
7. अथर्ववेद 3–7
8. अथर्ववेद 5–5
9. अथर्ववेद 6.21, 6.13, 6.137, 1–3
10. अथर्ववेद 2.27
11. अथर्ववेद 1, 2–3

****

© SHARAD